International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 03-08-2019; Accepted: 05-09-2019
www.hindijournal.com
Volume 5; Issue 6; November 2019; Page No. 06-08

छायावादी काव्यः भाषा और 'पल्लव'

भारती
एम. फिल, हिंदी विभाग, दिल्ली विश्विद्यालय, दिल्ली विश्विद्यालय, दिल्ली, भारत

प्रस्तावना

सन् 1920 के लगभग प्रारंभ हुई हिन्दी काव्यधारा को उसकी नवीन भावाभिव्यक्ति के कारण छायावाद के नाम से अभिहित किया गया। द्विवेदी युग की परिसमाप्ति पर कुछ समर्थ समीक्षकों ने इस शब्द की व्याख्या की और उसे हिन्दी साहित्य की एक महत्त्वपूर्ण काव्यधारा के रूप में प्रतिष्ठित किया।

खड़ी बोली को हिन्दी की काव्य भाषा के गौरवपद पर प्रतिष्ठा देना इस काल की ही देन है। 'सुमित्रानंदन पंत' की 'पल्लव' की भूमिका इस आंदोलन का घोषणा – पत्र थी जिसकी तर्क पुष्ट युक्तियों ने ब्रज भाषा प्रेमियों को निरस्त कर खड़ी बोली का हिन्दी काव्य क्षेत्र में एकमात्र प्रभुत्व स्थापित किया। नूतन शब्द निर्माण तथा शब्दों के नवसंयोजन द्वारा उनमें नवजीवन संचार, अर्थवत्ता और नूतन सौंदर्य उत्पन्न करना छायावादी कवियों की महान उपलब्धि है। इन कवियों ने भाषा में चित्रात्मकता, प्रतीकात्मकता, लाक्षणिकता, सांकेतिक एवम् व्यंजनात्मक तथा ध्वन्यात्मक गुणों का समावेश कर उसे काव्यभाषा के अनुरूप संवेदनशील, व्यापक, जीवन्त तथा समृद्ध रूप प्रदान किया।

'पल्लव' के प्रकाशन ने न केवल पंत के कवि व्यक्तित्व को प्रतिष्ठित किया बल्कि खड़ी बोली के काव्य, छायावाद के आविर्भाव और विकास एवं उसकी क्षमताओं तथा संभावनाओं के प्रति लोगो को आश्वस्त कर दिया। 'पल्लव' की भूमिका का ऐतिहासिक महत्त्व स्वतः प्रमाण्य है। श्री इलाचंद्र जोशी ने लिखा है –

''तुलसी कृत 'रामचरितमानस' की भूमिका के बाद हिन्दी में दूसरी क्रांतिकारी भूमिका मुझे 'पल्लव' की ही लगी। उसकी भाषा जैसी मनोहर थी उसका विषय – प्रतिपादन भी वैसा ही सशक्स था। छायावादी कविता की नींव को चट्टान की तरह बनाने में इस ऐतिहासिक भूमिका का बहुत बड़ा हाथ रहा है। 'पल्लव' ने तत्कालीन हिन्दी–काव्य–साहित्य में युगांतर उपस्थित कर दिया था, इस तथ्य से सभी परिचित है।''(1)

'पल्लव' की भूमिका में 'विज्ञापन' प्रवेश (क)' और 'प्रवेश (ख)' समाविष्ट है। विज्ञापन में 'पल्लव' के अन्तर्गत संगृहित कविताओं की चर्चा है, इन कविताओं की भाषा संबंधी विशेषताओं को देखे तो पंत ने लिंग और समास संबंधी अपनी धारणाओं को समझाया है। 'प्रवेश (क)' में मध्ययुगीन कथ्य पर एक विहंगम दृष्टिपात कर खड़ी बोली की सम्यकता का काव्य–भाषा के रूप में समर्थन किया गया है और 'प्रवेश (ख)' में काव्यभाषा का निरूपण अथवा छंद, अलंकार का सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया गया है। सन् 26 में लिखी हुई 'पल्लव' की यह भूमिका आज भी मूल्यवान है। काव्य के बाह्य उपकरणों एवं उसके बाह्य रूप का इतना मार्मिक और वैज्ञानिक विश्लेषण उस समय तक किसी ने नहीं किया था। डॉ० नगेन्द्र ने अपनी पुस्तक 'विचार और विश्लेषण' में 'पल्लव' की भूमिका के बारे में अपना अभिमत देते हुए कहा है –

''यह भूमिका आज से 30 वर्ष पूर्व लिखी गई थी जिस समय हिन्दी आलोचना अत्यन्त निर्धन थी। ••• हिन्दी साहित्य में पहली बार काव्य के बाह्य उपकरणों का–भाषा, अलंकार, छंद आदि का–मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया गया। भाषा, अलकर ,छंद की लय, तुक आदि यांत्रिक शब्द योजना प्रस्तुत विधान अथवा वर्ण–मात्रा–गणना मात्र नहीं है। उनका निश्चित मनोविज्ञान है। ••• 'पल्लव की भूमिका में काव्य की बाह्य छवियों के इन रहस्यों का पहली बार अत्यंत मार्मिक विश्लेषण हुआ है।'' (2)

इसी प्रकार 'हिन्दी साहित्य' में हजारी प्रसाद द्विवेदी जी अपना मत व्यक्त करते है – ''इस भूमिका ने न केवल पंत की कविताओं का और उनकी विवेचन शक्ति का महत्त्व स्पष्ट किया था, बल्कि समूची छायावादी कविता के लिए क्षेत्र प्रस्तुत किया था। इस भूमिका ने संस्कृत के वर्णवृत को हिन्दी से हटा दिया, छंदो की गति के संबंध में नई दृष्टि दी और छंद परिवर्तन के प्रति नया मनोभाव पैदा किया।''(3)

'पल्लव' की यह भूमिका युग प्रवर्तक भूमिका है। इसने इस काल के हिन्दी जगत में क्रांति उत्पन्न की तथा साथ ही यह अपने आँचल मे काव्य–मर्म की गरिमा को छिपाए हुए है। इसने काव्य कला के प्रति एक नया बोध दिया। जिसे बाद में पाश्चात्य आलोचना के सम्पर्क में आकर हिन्दी जगत ने समझा। काव्य भाषा को व्याकरण की दृष्टि से विशुद्ध होने के साथ ही संगीत, लय, शब्द अर्थ के प्रति जागरूक होना चाहिए। अब काव्य–कला शास्त्रीय रूढ़ियों से मुक्त होकर अंतर्विश्लेषणात्मक और मनोवैज्ञानिक होने लगी है।

इंडियन प्रेस ने 'पल्लव' को प्रकाशित करना स्वीकार कर लिया था। पंत ने 'पल्लव' की भूमिका के रूप में 'विज्ञापन' और 'प्रवेश (ख)' लिख लिया था। इसी समय रत्नाकरजी ने साहित्य सम्मेलन के वार्षिक अणिवेशन के सभापति के पद से खड़ी बोली और विशेषतः छायावादी कविता की जो भर्त्सना की तथा ब्रजभाषा में कविता करने का प्रोत्साहन देने के लिए विशेष पदकों, पुरूस्कारों तथा स्कॉलरशिप निर्धारित करने की साहित्य सम्मेलन से आशा की उससे क्षुब्ध होकर पंत ने 'प्रवेश (क)' लिखा। खड़ी बोली गया भाषा के रूप में स्वीकृत और स्थापित हो गई थी किन्तु उसके काव्योचित गुणो के बारे में मतभेद था। रत्नाकर जी का खड़ी बोली की काव्य गरिमा के प्रति तीव्र विरोध देख पंत के लिए यह आवश्यक हो गया कि वह पहले ब्रजभाषा ओर खड़ी बोली की काव्य शक्ति पर तुलनात्मक प्रकाश डालें और तत्पश्चात् उसके स्वरूप, लिंग–निर्णय, समास, अलंकार ध्वनि, संगीत शब्द विधान, छंद आदि का विवेचन करें।

पंत ने 'पल्लव' की भूमिका में ब्रजभाषा के रीतिकालीन काव्य पर रत्नाकरजी के भाषण से उत्तेजित होकर कठोर प्रहार किया था तथा आज के ब्रजभाषा के कवियों की तुलना अँधेरी बाँबी में रिक्त केंचुलों को बचाने वाले संपेरों से की थी।

1930–31 के लगभग डॉ० रामकुमार वर्मा सम्मेलन के साहित्य मंत्री थे और सम्मेलन पत्रिका का संपादन करते थे। तब उनकी श्री मिश्रजी से 'पल्लव' के बारे में बातचीत हुई। डॉ० रामकुमार वर्मा का कहना है कि –

''श्री मिश्रजी ने पल्लव की भूरि–भूरि प्रशंसा करते हुए कहा था कि 'पल्लव' के महाकवि ने हिन्दी काव्य को ऐसी दिशा प्रदान की

है कि मैं उसे पढ़कर आत्मविभोर हो गया। मैं तो 'पल्लव' को सौ में से पाँच अधिक नम्बर देने को तैयार हूँ।'' (4)

'पल्लव' प्रकाशित होने पर 'माधुरी' में निराला जी के एकमात्र विरोधी स्वर के अतिरिक्त अन्य सभी काव्य प्रेमियों ने उसे स्नेह–सम्मान दिया। श्री शुकदेव विहारी मिश्र ने तो सम्मेलन पत्रिका में 'पल्लव' की भूमिका के संबंध में अपनी आंशिका सहमति प्रकट करते हुए भी उसके काव्य की विशेष रूप से प्रशंसा की। उन्हीं के शब्दों में –

''जो 48 ग्रंथ जाँच के लिए मेरे सामने आए थे उनमें से मैं 'पल्लव' को सर्वश्रेष्ठ समझता हूँ ••• इतना कहना आवश्यक जान पड़ता है कि आजकल के खड़ी बोली के कवि वर्तमान साधारण भाषा में रचना न करके संस्कृत–मिश्रित भाषा में करते है। यह बात पंत जी की रचना में भी पाई जाती है। ••• 'पल्लव' में आपने बहुत से विषयों पर उत्कृष्ट रचना की है और प्रायः सभी में अनमोल छंद कहे है। •••'' (5)

पंत का युग भारतीय राजनीतिक सांस्कृतिक जागरण का ही युग है। उनका कवि राष्ट्रीय दायित्व का भागी है। पंत ने इस दायित्व का सम्यक् वर्णन करते हुए कहा कि कवि की वाणी को राष्ट्र चेतना, स्वतंत्रता संग्राम, देश–जीवन का प्रतिनिधित्व करना है। उनकी कविता राजाओं के भोग–विलास ऐश्वर्य तथा शौर्य का गुणग्राही प्रतिबिंब अथवा मात्र वाक्–चाल भर नहीं है, वह जन जीवन का जीवंत दर्पण है। पंत काव्य को अपने आर्विभाव के साथ ही खड़ी बोली के अनुकूल परिस्थितियाँ मिली। उन्होंने सहज ही खड़ी बोली को अपना लिया। वे उसे अपनी काव्य–भाषा के रूप में स्वीकार कर उसमें काव्योचित गारिमा भरने में संलग्न हो गए। पल्लव की भूमिका इस बात का प्रमाण है कि पंत ने कविता के लिए खड़ी बोली को इसलिए चुना कि उन्हें उसके उज्जवल भविष्य में दृढ़ विश्वास था। जब खड़ी बोली अथवा ब्रजभाषा की काव्योचित श्रेष्ठता तथा द्वंद्व का प्रश्न उठा तो उन्होंने निर्भीक आत्मविश्वास के साथ खड़ी बोली का पक्ष लिया –

''हमें भाषा नहीं, राष्ट्रभाषा की आवश्यकता है, पुस्तकों की नहीं मनुष्यों की भाषा, जिसमें हम हँसते–रोते, खेलते कूदते, लड़ते–गले मिलते, साँस लेते रहते हैं ••• हँसती–गरजती, चढ़ती–गिरती, संकुचित–प्रसारित होती, हमारे रूदन, विजय–पराजय, चित्कार–किलकार, संधि संग्राम को प्रतिध्वनित कर सके, उसमें स्वर भर सके।'' (6)

काव्य की भाषा के रूप में ब्रजभाषा को महत्त्व देने वालों से पंत का कहना था कि अघ और घघ की भाषा एक ही होनी चाहिए। उसे ही काव्य की भाषा मानना होगा जो मन तथा व्यवहार और वार्तालाप का भी माध्यम है।

सन् 26 में खड़ी बोली का विरोध होते हुए भी वह 'पल्लव' की भूमिका तथा काव्य के रूप में अथवा काव्य भाषा के रूप में प्रतिष्ठित हो चुकी थी। द्विवेदी युग के कवि उसका सम्यक् परिष्कार कर चुके थे। किंतु तब उसमें वह काव्योचित माधुर्य और लोच नहीं आया था जिसकी पूर्ति आगे चलकर छायावादी कवियों विशेषकर पंत ने की है पंत ने हिन्दी को कोमलकांत पदावली दी। उसे अत्यधिक परिष्कृत और परिमार्जित बनाया, उसमें मिठास भरी। उसे सशक्त, मधुर और काव्यमय बनाने में सहायता देकर तथा अन्य समकालीन कवियों के साथ उसे द्विवेदीयुगीन इतिवृत्तात्मकता से मुक्त कर छंद, भाषा और अंलकारों का नवीन व्यापक सौंदर्य प्रदान किया।

खड़ी बोली और ब्रजभाषा की समस्या पंत के लिए कभी भी वैयक्तिक रागद्वेष की समस्या नहीं रही, राष्ट्र–भाषा या राष्ट्र संस्कृति की समस्या रही है। 'पल्ल्व' के 'प्रवेश (क)' में पंत ने ब्रजभाषा और खड़ी बोली का तुलनात्मक परीक्षण किया है। वह कहते हैं –

''हमारे विचार अपने ही समय के चरखे में कते–बुनें अपनी ही इच्छा के रंग वस्त्र चाहते हैं ••• खड़ी बोली में चाहे ब्रजभाषा की श्रेष्ठता इमारतों के होड़–जोड़ की अभी कोई इमारत भले ही न हो उसमें अभी 'मानस' के सी पवित्रता का अभाव हो ••• उसमें नए हाथों का प्रयत्न, जीवित साँस का स्पंदन आधुनिक इच्छाओं के अंकुर, वर्तमान के पद चिंह् भूत की चेतावनी, भविष्य की आशा अथवा नवीन युग की नीवन सृष्टि का समावेश है।'' (7)

'प्रवेश (ख)' में पंत ने अनेक तत्वों पर प्रकाश डाला है। वे बताते है कि, भाषा का प्रयोजन क्या है? काव्य भाषा की क्या विशेषताएँ है कि भाषा पंत के अनुसार 'संसार का नादमय चित्र है, ध्वनिमय स्वरूप है ••• नवीन युग की नवीन अकांक्षाओ, क्रियाओं, नवीन इच्छाओं, आशाओं के अनुसार उसकी वीणा से नए गीत, नए छंद, नए राग, नई रागनियाँ, नई कल्पनाएँ तथा नई भावनाएँ फूटने लगती हैं।'

काव्य के लिए पंत चित्र–भाषा को महत्त्व देते हैं। पंत काव्य स्वयं चित्रमत्ता का अद्वितीय उदाहरण है। उनकी चित्रमयी शैली की सफलता पर शायद ही किसी को संदेह हो। उनका कहना है –

''शब्द स्वर होने चाहिए जो बोलते हों ..... जो अपने भाव को अपनी ही ध्वनि में आँखों के सामने चित्रित कर सकें।'' (8)

पंत के अनुसार वही अलंकार काव्य में स्वीकार्य हैं जो काव्याभिव्यक्ति को जीवित बनाने की क्षमता रखते हैं।

''अलंकार भावाभिव्यक्ति का द्वार हैं, भाषा की पुष्टि के लिए, राग की परिपूर्णताा के लिए आवश्यक उत्पादन है।'' (9)

काव्य और अलंकार के संबंध पर विशद विवेचन करने के साथ ही पंत 'पल्लव' के 'प्रवेश (ख)' में कविता और छंदों के घनिष्ठ संबंध पर महत्त्वपूर्ण प्रकाश डालते हैं –

''कविता हमारे प्राणों का संगीत है, छंद हत्कपन्न, कविता का स्वभाव ही छंद में लयमान होना है।'' (10)

उनका विचार है कि ब्रजभाषा के अलंकृत काल में राग एवं संगीत के आदर्श के पतन का एक मुख्य कारण उस काल के कवियों का छंदों का चुनाव है।

छायावादी काव्य के प्रारंभ में अनेक कविताओं में भावों की सहज स्वाभाविक अभिव्यक्ति में एक दोष की चर्चा होती रही है – तारतम्यहीनता की। लेकिन इसे हम नई काव्य –प्रवृत्ति के गुण के रूप में भी देख सकते हैं। पल्लव की अनेक कविताओं में यह गुण या दोष पाया जाता है। 'उच्छवास' कविता के विषय में कवि ने स्वयं पल्लव की भूमिका में लिखा है कि –

''उन्होंने आवश्यकतानुसार छंद बदले हैं और भावों के सही संप्रेषण के लिए विभिन्न ध्वनिपरक शब्दों का प्रयोग किया है।'' (11)

'परिवर्तन' कविता का अनुभव संसार जितना विशद, गहरा और आयामी है, उतना ही सशक्त उसका अभिव्यक्ति कौशल है। इसमें एक साथ कोमल, भावनामय और कठोर भाषा के दर्शन होते हैं। भाषा के विषय में स्वयं पंत जी नें जिस मान्यता की स्थापना 'पल्लव' की भूमिका में की है, 'परिवर्तन' में उसका तेवर देखते ही बनता है। आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी ने पल्लव के भाव विषयक सौंदर्य के विषय में कहा है –

''पंत जी का आगमन हिन्दी में एक क्रांतिकारी घटना है। मुझे याद है कि उस समय खड़ी बोली को मान्यता तो मिल गई थी किन्तु यह आंदोलन फिर भी चल रहा था कि खड़ी बोली में सुकुमार भावों को व्यक्त करने की क्षमता नहीं है। मैं भी खड़ी बोली के पक्ष में नहीं था, किंतु जब मैंने पंत जी द्वारा रचित 'पल्लव की भूमिका' पढ़ी तो मेरा मत बदल गया। इससे यही सिद्ध होता है कि पल्लव की भाषा कवि काव्य सर्जन् की ही उपलब्धि नहीं है अपितु उस काल की भाषा विषयक चिन्तन का प्रतिनिधित्व भी करती है।''(12)

परिवर्तन कविता में भाषा को प्रयाणोत्पादक बनाने के लिए

शब्द–युग्मों का प्रयोग किया है। जिनसे भावों की अभिव्यक्ति अत्यन्त सशक्त रूप में हो सके। इसमें भाषा के सटीक प्रयोग का एक उदाहरण द्रष्टव्य है –

''ऐ अनंत हत्कंप। तुम्हारा अविरत स्पंदन
सृष्टि शिराओं में संचारित करता जीवन,
खोल जगत के शत–शत नक्षत्रों–से लोचन,
भेदन करते अंधकार तुम जग का क्षण – क्षण।'' (13)

इन पंक्तियों में कवि ने परिवर्तन के तीव्र, पकड़ में न आने वाले, आकास्मिक और अज्ञेय रूप की अभिव्यक्ति की है।
'पल्लव' की भाषा ओजमयी और चित्रमयी है। कहीं–कहीं शब्दों का स्वीकृत लिंगों में प्रयोग नहीं किया गया है और यह इसकी भूमिका में लेखक स्पष्ट कर देता है –

''मुझे अर्थ के अनुसार ही शब्दों को स्त्री लिंग–पुल्लिंग मानना अधिक उपयुक्त लगता है। जो शब्द केवल अकारांत–ईकारांत के अनुसार ही पुल्लिंग अथवा स्त्रीलिंग हो गए है और जिनमें लिंग का अर्थ के साथ सामंजस्य नहीं मिलता, उन शब्दों का ठीक–ठीक चित्र ही आँखों के सामने नहीं उतरता और कविता में उनका प्रयोग करते समय कल्पना कुंठित सी हो जाती है।'' (14)

भावाभिव्यक्ति के जिस भी माध्यम–अभिव्यंजना लाक्षणिकता, चित्रात्मकता, गेयता आदि को पंत ने अपनाया है वह सजीव और मोहक चित्रों को स्वाभाविक रूप से प्रस्तुत तो करता ही है, पंत को खड़ी बोली को माँजने एवं संवारने का श्रेय भी देता है। अपने काव्य में विशेष रूप में 'पल्लव' में जैसे प्रतीकों का उन्होंने प्रयोग किया है वह अन्यत्र कम ही मिलेंगे। नंददुलारे वाजपायी के अनुसार –

''पंतजी ने अपने समय की खड़ी बोली को संस्कृत की शब्दावली देकर दृढ़ बनाया, हिन्दी के अनुरूप अनेक प्रयोग अविष्कृत किए और भाषा में एक नई छटा ला दी। उन्होंने खड़ी बोली को भावाभिव्यक्ति की विशेष शक्ति प्रदान की।'' (15)

पल्लव का काव्य प्राणों का सरस संगीत है। भाषा, भाव और आयु सभी दृष्टि से 'पल्लव' पंत की प्रौढ़ रचना है। पल्लव का काव्य खड़ी बोली के परम उत्कर्ष का उद्घोष है। द्विवेदी युगीन परिपाटी के विरूद्ध संगीतमय क्रांति है। पल्लव की भाषा के लिए श्री इलाचंद जोशी जी का कहना है –

''खड़ी बोली की रूखी काया में इस सीमा तक निखार लाया जा सकता है, उसकी खुरदरी मिट्टी को इस हद तक भुरभुरी पोली और मुलायम बनाकर उसमें इतने सुंदर और रंग–बिरंगे फूल खिलाये जा सकते हैं, इसकी कल्पना – तक कोई नहीं कर सकता था।'' (16)

हजारी प्रसाद द्विवेदी जी का कथन है

''पल्लव बिल्कुल नए काव्य गुणों को लेकर हिन्दी साहित्य जगत में आया ..... पंत में कल्पना, शब्दों के चुनाव से ही शुरू होती है। छन्दों के निर्वाचन और परिवर्तन में भी वह व्यक्त होती है। उसका प्रवाह अत्यन्त शक्तिशाली है। इसके साथ जब प्रकृति और मानव–सौंदर्य के प्रति कवि के बालकोचित औत्सुक्य और कुतूहूल के भावों का सम्मिलन होता है तो ऐसे सौंदर्य की सृष्टि होती है जो पुराने काव्य के रसिकों के निकट परिचित नहीं हेाता। ..... '' (17)

'पल्लव' के भावों की अभिव्यक्ति में अद्भुत सरल और ईमानदारी थी। कवि बँधी रूढ़ियों के प्रति कठोर नहीं है, उनके प्रति व्यंग्य और उपहास का प्रहार नहीं किया, पर वह उनकी बाहरी बातों की उपेक्षा करके अंतराल में स्थित सहज सौंदर्य की ओर पाठक का ध्यान आकृष्ट करता है।

खड़ी बोली को भविष्य की सुवर्णाशा सिद्ध करते हुए पंत कहते हैं –

''खड़ी बोली आगे की सुवर्णाशा है उसकी बालकता में भावी की लोकोज्जवल पूर्णिमा छिपी हुई है। यह हमारे भविष्याकाश की स्वर्गंगा है, अस्पष्ट ज्योतिपुंज में न जाने कितने जाज्वल्य मान, सूर्य, शशि, असंख्य ग्रह–उपग्रह, अमन्द नक्षत्र तथा अनिद्य लावण्य लोक अन्तर्हित है। वह भार की हतकंपन देश की शिरोपशिराओं में नवजीवन संचारिणी संजीवनी है।'' (18)

अतः पल्लव में भाव, भाषा, लय और अलंकरण के विविध उपकरणों का बड़ी कुशलता से समावेश हुआ है। 'पल्लव' में प्राकृतिक रहस्य की भावना ज्ञान की जिज्ञासा में परिणत हो गई है। इसकी सीमाएँ छायावादी अभिव्यंजना की सीमाएँ हैं। इसमें पंत जी कल्पना द्वारा नवीन वास्तविकता की अनुभूति प्राप्त करने की चेष्टा कर रहे थे। इसके साथ ही इसमें मानव जीवन की अनित्य वास्तविकता के भीतर सत्य को खोजने का प्रयत्न भी है, जिसके आधार पर नवीन वास्तविकता का निर्माण किया जा सके। इसे आलोचक भी छायावाद का पूर्ण उत्कर्ष मानते हैं। डॉ० नगेन्द्र का मानना है –

''पल्लव की भूमिका हिन्दी में छायावाद–युग के आविर्भाव का ऐतिहासिक घोषणा–पत्र है।'' (19)

संदर्भ सूची

1. स्मृति चित्र, पृष्ठ संख्या – 137
2. वही पृष्ठ संख्या – 96
3. हिन्दी साहित्य की भूमिका, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ संख्या – 46
4. भेंटवार्ता, अप्रैल, पृष्ठ संख्या – 67
5. सम्मेलन पत्रिका, सम्वत् 1985, भाग–1, संख्या 1, पृष्ठ संख्या – 27–37
6. सुमित्रानंदन पंतः जीवन और साहित्य, शांति जोशी, पृष्ठ संख्या – 182
7. पल्व भूमिका, सुमित्रानंदन पंत, राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 19
8. वही पृष्ठ संख्या – 22
9. वही पृष्ठ संख्या – 24
10. वही पृष्ठ संख्या – 28
11. वही पृष्ठ संख्या – 17
12. हिन्दी साहित्य की भूमिका, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ संख्या – 470
13. पल्लव, सुमित्रानंदन पंत (परिवर्तन), राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 154
14. आधुनिक हिन्दी काव्य भाषा – डॉ० रामकुमार सिंह, पृष्ठ संख्या – 620
15. हिन्दी साहित्य : बीसवीं शताब्दी – नंददुलारे वाजपेयी, पृष्ठ संख्या – 208
16. स्मृति चित्र, पृष्ठ संख्या – 136
17. हिन्दी साहित्य की भूमिका, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ संख्या – 463 – 64
18. पल्लव, (भूमिका) सुमित्रानंदनपंत, राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 28
19. सुमित्रानंदनपंत : जीवन और साहित्य, शांति जोशी, पृष्ठ संख्या –29